ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(11): 162-164
www.allresearchjournal.com
Received: 10-09-2021
Accepted: 12-10-2021

डॉ. अनिल गुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर, चित्रकला विभाग, राज. कला महाविद्यालय, कोटा, **राजस्थान,** भारत

प्रतिभा यादव
शोधार्थी, चित्रकला विभाग, राज. विश्वविधयालय जयपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ. अनिल गुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर, चित्रकला विभाग, राज. कला महाविद्यालय, कोटा, **राजस्थान,** भारत

लोक कला में ज्यामितीय रूप

डॉ. अनिल गुप्ता, प्रतिभा यादव

सारांश
लोक कला अलग–अलग स्थान पर अलग–अलग नाम से जानी जाती है। जो स्थान विशेष की सभ्यता संस्कृति की परिचायक है। जैसे राजस्थान में मांडना, महाराष्ट की रंगोली, उत्तरप्रदेश का चौक पूरना, असम बंगाल में अल्पना। इनको बनाने में ज्यामितीय आकारों का विशेष महत्तव है। ये ज्यामितीय आकार प्रतीक स्वरूप विशिष्ट अर्थ लिए होते हैं। त्रिभुज पेड, पौधे पहाड के प्रतीक, तो वृत सूर्य चांद का प्रतीक, उल्टे सीधे त्रिभुज मिलकर मानवाकृति, पशु आकृति का प्रतिनिधित्व करते हैं। विषय और प्रसंग के अनुसार इनके अर्थ बदलते रहते हैं।

कूटशब्दः लोक कला, सभ्यता, संस्कृति

प्रस्तावना
लोक कला किसी भी देश की सभ्यता, संस्कृति की समृद्वि की परिचायक है। जिसके विकास के लिए जन समुदाय की भागीदारी एवं जागरूकता आवष्यक है। ताकि यह एक पीढी तक आसानी से पहुंच सके तथा अपने मूल स्वरूप में जीवित रह सके। ताकि इसमें प्रयुक्त ज्यामितीय आकारों के पीछे छिपे रहस्य, तांत्रिक उद्देष्य, मांगलिक उद्देष्य प्रतीकात्मक महत्व को समझा जा सके।

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
लोक कला जनसाधारण की सहज अभिव्यक्ति है जो गांवों कस्बों आदिवासी इलाकों में जन्मी और पल्लवित हुई, यह अपने सरल सहज स्वरूप के कारण पीढी दर पीढी विकसित होती गई और हमारी धार्मिक एवं आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का प्रतीक बन गई।
'लोक' व 'कला' दोनों शब्दों की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के लोक एवं कला से हुई , लोक का अर्थ है देखना व कला का अर्थ है कोमल एवं मधुर अर्थात् लोक कला का अर्थ हुआ कोमल व मधुर को देखना।
विद्वानों ने लोक कला को अलग–अलग परिभाषित किया है। कला विलास–" जन जन की जन जन द्वारा व जन जन हेतु निस्तृत कला लोक कला है।
डॉ श्याम परमार के अनुसार लोक कला का अर्थ लोक मन अथवा जनजीवन की सहज अभिव्यक्ति से है। लोक कला जो देहातों, कस्बों, आदिवासी इलाकों में प्रचलित है और जो सामाजिक उत्सवों, रीति रिवाजों और जनपदिय सौन्दर्यबोध से संबंधित है।
लोक कला को परिभाषित करना उसके विषाल स्वरूप को छोटा करने जैसा है। लोक कला में न तो कोई निष्चित सिद्वान्त है न ही नियम कलाकार स्वतंत्र होकर हृदय की सुबोधता से चित्रण करता है।लोक कला में सौन्दर्य और मंगल दोनों की भावना निहित होती है। यदि इसमें मंगल की भावना न हो तो इसका कोई महत्व नहीं है। क्यों कि मांगलिक भावों को ध्यान में रखकर ही विभिन्न अवसरों पर निर्माण किया जाता है। लोक कलाओं में रंगोली, कोहवर, थापा कला, गोदना, सांझी, मेहन्दी, मधुबनी वर्ली प्रमुख हैं।
लोक कलाओं के विषय में जब बात होती है और उसमें प्रयुक्त ज्यामितीय आकारों की चर्चा न हो तो लोक कलाओं का वर्णन अधूरा सा लगता है। सम्पूर्ण लोक कलाओं का आधार ही ज्यामितीय रूप है। इसमें प्रयुक्त होने वाले प्रतीकात्मक आकारों में सर्वाधिक लोकप्रिय स्वास्तिक एवं विभिन्न ज्यामितीय रूप हैं। जिनका सौन्दर्य बोध के साथ–साथ विषयगत महत्व भी है।
लोक कलाओं में प्रयुक्त ज्यामितीय आकारों यथा त्रिभुज, वृत, आयत, वर्ग, षटकोण, पंचकोण इत्यादि सौन्दर्य बोध के साथ–साथ अपने में विशिष्ट अर्थ समाए हुए हैं। एक वृत महज एक गोला ही नहीं इसमें चांद, सूरज, पृथ्वी, ब्रहमाण्ड आदि कई अर्थ हो सकते हैं। त्रिभुजाकृति में स्त्रियाकृति, पुरूषाकृति समाहित हैं।

वर्ग के चार खण्डों में तथा स्वास्तिक की चार भुजाओं में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इत्यादि समाहित हैं।

भारत विभिन्नताओं वाला देष है। सांस्कृतिक विभिन्नता के कारण लोक कलाओं के नाम में भी विभिन्नता नजर आती है, जो अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग नामों से जानी जाती है। राजस्थान में मांडना, महाराष्ट्र में रंगोली, मध्यप्रदेष, गुजरात में साथिया, बंगाल असम में अल्पना, दक्षिण में कोलम, उत्तरप्रदेष में चौक पूरना इत्यादि हैं।

रंगोली भारत की प्राचीन लोक कलाओं में से एक है जो अलग–अलग स्थानों पर अलग– अलग नाम से जानी जाती है।, रंगोली बनाते समय ज्यामितीय आकारों के साथ साथ पुष्प पत्तियो का प्रयोग भी किया जाता है। (चित्र सं.1) ज्यामितीय आकारों द्वारा सुन्दर रंगोली बनायी गई है।

चित्र 1: रंगोली

मांडना शब्द मंडन से लिया गया है। मांडन बनावट के आधार पर कई तरीके के होते हैं जिसमें ज्यामितीय आकार का प्रचुरता से प्रयोग किया जाता है। बिन्दुओं से बनने वाले मांडणों में तांत्रिक विचारों की झलक मिलती है। मांडणों में चौपड, चकउ, चौक, स्वास्तिक, पगल्या, श्री पद प्रमुख हैं। (चित्र सं. 2) में ज्यामितीय आकारों के सहयोग से मांडना बनाया गया है। रंगों में खडिया, गेरू, रामरज का प्रयोग किया जाता है।

चित्र 2: मांडना

अहपन बिहार की प्रसिद्व लोक कला है आमतौर पर अहपन सफेद रंग में ज्यामितीय आकारों का प्रयोग करते हुए विभिन्न मांगलिक अवसरों पर बनाया जाता है ।

थापा कला काफी प्राचीन लोक कला है। जिसमें हाथ की अंगुलियों एवं हथेली के सहयोग से थापा मारकर बनाया जाता है। विभिन्न मांगलिक अवसरों पर अलग अलग प्रकार के थापे प्रचलित हैं। (चित्र सं.3) में ज्यामितीय आकारों द्वारा नवरात्रा उत्सव में बनाया जाने वाला थापा है। यह आदिवासी ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक प्रचलित है।

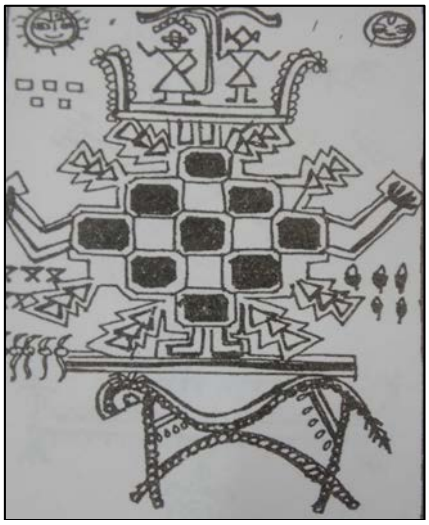

चित्र 3: थापा कला

गोदना मानव अंगों पर सुई या नुकीली वस्तु से की जाने वाली कला है। नाक, गाल, ठोडी, हाथ,पैर पर सुई की सहायता से सुन्दर डिजाइनें बनायी जाती हैं। जिनमें फूल पत्तियों के साथ साथ स्वास्तिक ज्यामितीय नमूने नजर आते हैं। अंगों पर की जाने वाली यह कलाकारी व्यक्ति समाज विशेष की पहचान की भी धोतक है। जो मृत्युपर्यन्त उनके साथ रहते हैं।

चित्र 4: गोदना डिजाइन

कोलम तमिलनाडु में विशेष प्रसिद्व है। महिलाऐं प्रत्येक दिवस सूर्योदय से पहले चावल के आटे से मुख्य द्वार पर कोलम बनाती हैं। कोलम ज्यामितीय सममितीय आकृति से सजाई जाती है। लोक मान्यता है कि बुरी आत्मा इन आकारों में प्रवेष करती है और बुरी शक्ति को घरों में जाने से रोकती है ।

चित्र 5: कोलम तमिलनाडु

वर्ली महाराष्ट्र की प्रसिद्व लोक कलाओं में से है जो वहां की आदिवासी जनजातियों द्वारा तैयार की जाती है। वर्ली चित्रों की मुख्य विशेषता इसमें प्रयुक्त ज्यामितीय आकार हैं। दो त्रिभुजों को मिलाकर बनायी गई मानवाकृति, पषु आकृति तथा प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाले विभिन्न ज्यामितीय आकार इसके आकर्षण के केन्द्र हैं। चांद सूरज वृताकार रूप में, उंचे पेड, पर्वत त्रिभुजाकार में दिखाई देते हैं।वर्ली चित्रों का मुख्य विषय वहां की जनजाति के दैनिक विषयों से जुडे हुए होते हैं।

चित्र 6: महाराष्ट्र की वर्ली पेंटिंग।

मधुबनी मिथिला प्रदेष में जन्मी एवं पल्लवित हुई इसी कारण ये मिथिला कला के रूप में भी जानी जाती है। इसके विषय भी कृष्ण की लीलाओं से ओत प्रोत हैं। मधुबनी चित्रों की प्रमुख विशेषता इसमें प्रयुक्त अलंकरणों की भरमार है। अलंकरणों में ज्यामितीय आकारों, डिजाइनों का प्रयोग किया गया है जो उसे अलग पहचान प्रदान करते हैं।

चित्र 7: मधुबनी (मछली परिवार)

लोक कलाओं की ये भावमयी, मोहक आकृतियां आज उपयोगी कला के रूप में दिनों दिन अधिक लोकप्रिय होती जा रही हैं। आज कलाकार इसमे नये विषयों का समावेष, माध्यम एवं बनवाट में नये नये आयामों की खोज कर रहा है। लोक कलाओं के निर्माण में ज्यामितीय आकारों में काफी सम्भावनाऐं हैं। लोक कलाएं अपनी गौरवषाली अतीत के कारण वर्तमान में अधिक लोकप्रिय एवं समृद्व बनी हुई हैं। किसी भी स्थान की लोक कला उस देष, समाज की समृद्वि उन्नति की परिचायक होती है अतः इसका जितना प्रचार, प्रसार होगा उतना ही देष समृद्व विकसित होगा।

संदर्भ

1. सिंह डॉ ममता, दृष्य कला और लोक कला के मूल तत्व एवं सिद्वान्त, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर प्रथम संस्करण 2015।
2. गुप्ता डॉ नलिमा, भारतीय लोक कला, स्वाति पब्लिकेषन, दिल्ली प्रथम संस्करण 2010।
3. भावसार प्रो. डॉ बीरबाला, सौन्दर्य दर्षन,, प्रथम संस्करण 2012, जयपुर।
4. कुषवाह अनन्त, मॉण्डणे, राजस्थान पत्रिका प्रकाषन, जयपुर 1998–2000।
5. भावसार प्रो. डॉ बीरबाला, आदिवासी कला, द्वितीय संस्करण, 2007, सूचना प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार दिल्ली, 110028।
6. https://www.rachnakar.org.
7. https://hi.m.wikipedia.org.
8. https://www.abhivyakti.hindi.org.